की है।

5. जीव-विकास-सिद्धान्त *(The Theory of Biological Evolution)*

परिचय

विकास-सम्बन्धी समस्याओं की ओर प्राचीन काल के दार्शनिकों का भी ध्यान आकृष्ट हुआ था। इस विषय पर एनेग्जीमेंडर, एम्पीडोक्लस् आदि के मत उल्लेखनीय हैं। पर डार्विन ने पहली बार वैज्ञानिक अनुसन्धानों के आधार पर जीव-विकास की सत्यता तथा विकास का

Scanned with CamScanner

नियम सिद्ध किया है। अब हमें यह देखना है कि डार्विन ने (i) कैसे विकास की वास्तविकता सिद्ध की है और (ii) उसके अनुसार विकास-प्रक्रिया का नियम क्या है।

(i) साधारणतः यह विचार किया जाता है कि प्राणी-जगत् में एक जाति दूसरी जाति से सर्वथा भिन्न है। एक जाति का दूसरी जाति से कोई सम्बन्ध नहीं है। डार्विन ने अपनी गवेषणाओं से यह सिद्ध किया है कि एक जाति दूसरी जाति से सर्वथा भिन्न नहीं है। क्रम-क्रम से परिवर्त्तित होकर ही एक जाति दूसरी जाति का रूप धारण कर लेती है। अतः जीवों का वर्त्तमान रूप विकास का परिणाम है। विकास की वास्तविकता को सिद्ध करने के लिए डार्विन ने कई प्रमाण दिये हैं।

जीव-विकास के प्रमाण

डार्विन ने जीव-जन्तुओं के निरीक्षण के उपरान्त पाया कि एक ही किस्म के पक्षी भिन्न देशों में भिन्न प्रकार के हैं। उन्होंने पाया कि व्रस (एक चिड़िया) के पर भिन्न देश में भिन्न प्रकार के है। इससे उन्होंने यह सिद्ध किया कि विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के कारण ही उनके रंगों में भेद हो जाता है। इसका यह अर्थ हुआ कि एक किस्म के जीव विभिन्न परिस्थितियों में दूसरे रूप में परिवर्त्तित हो जाते हैं। इससे जीव के विकास की वास्तविकता सिद्ध होती है।

विश्व के जीव-जन्तुओं का रूप, रंग, आकार तथा किस्म के देखने से उन्हें एक क्रम में रखा जा सकता है। एक का दूसरे से बहुत कम ही भेद रहता है। इससे यह सिद्ध होता है कि उनके बीच कोई मौलिक अन्तर नहीं है, बल्कि वे एक-दूसरे के परिवर्त्तित रूप हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि जीवों में विकास होता है।

गर्भावस्था में जीवों का विकास समान रूप से होता है। उनके और-और अंगों में भेद होता है, पर गर्भावस्था में विकास-क्रिया समान होती है। इससे यह सिद्ध होता है कि जीवों का विकास एक ही स्रोत से हुआ है। इसीलिए भेद होते हुए भी उनमें इस बात की समानता है।

पृथ्वी में कई तहें हैं। उन तहों में नीचेवाली तहें ऊपरवाली तहों से प्राचीन हैं। उन तहों में जीवों की हड्डियाँ पाई गई हैं। नीचेवाली तहों में पाई जानेवाली हड्डियाँ ऊपरवाली हड्डियों से अधिक प्राचीन हैं। पर ऊपरी तहों में पाई जानेवाली हड्डियाँ नीचेवाली हड्डियों से अधिक जटिल पाई गई हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि जीवों का परिवर्त्तन सरल से जटिल रूप में हुआ है। इससे जीव-विकास की वास्तविकता सिद्ध होती है।

(ii) अब यह विचारना है कि डार्विन के अनुसार जीव-विकास की विशेषताएँ क्या हैं और उसका नियम क्या है।

जीव-विकास की विशेषताएँ

जीव का प्रारम्भ कैसे हुआ, यह समस्या डार्विन के लिए मुख्य नहीं है। उसने इसपर संगत विचार प्रकट नहीं किया है। बहुत ही संक्षेप में उसने यह बतलाया है कि ईश्वर ने एक या कुछ सरल जीवकोषों की उत्पत्ति की है। उन थोड़े-से-सरल जीवकोषों से अनन्त अति सुन्दर और अति आश्चर्यजनिक जीवों का विकास हुआ है और हो रहा है। जीवों के विकसित होने से उनकी अलग-अलग जातियाँ हो गई हैं। फिर उन जातियों में परिवर्त्तन होते-होते वे अपने पूर्वजों से इतना भिन्न हो जाती हैं कि उनकी नई जाति हो जाती है। एक जाति से दूसरी जाति, उससे तीसरी और इसी प्रकार विकास-क्रम चलता रहता है। एक जाति दूसरी

Scanned with CamScanner

जाति से ही विकसित होती है, अतः उनमें मौलिक भेद नहीं है। डार्विन के अनुसार जातियाँ परिवर्त्तनशील है। यह विचार ईसाई धर्म और अरस्तू के विचार से भिन्न है। उनके अनुसार ईश्वर ने जीवों की अलग-अलग जातियाँ उत्पन्न की है। वे जातियाँ अपरिवर्त्तनशील है। एक जाति दूसरी में नही परिवर्त्तित हो सकती।

डार्विन के अनुसार विकास-क्रम सरल से जटिल रूप की ओर अग्रसर होता है। जीव सरल रूप से जटिल रूप में परिवर्त्तित होते हैं। सरल जीव-कोषों से ही विकसित होकर आज हम मनुष्य-जाति की तरह जटिल जीव देख रहे हैं। निरिन्द्रिय से सान्द्रिय और एकेन्द्रिय से अनेकेन्द्रिय और इसी प्रकार जीवों में जटिलता आती गई। आधुनिक विचारकों ने बतलाया है कि विकास-क्रम केवल सरल से जटिल रूप में नहीं, बल्कि जटिल से सरल रूप में भी चलता है।

डार्विन ने विकास-क्रम को निरुद्देश्य बतलाया है। जातियों का परिवर्त्तन बिना किसी उद्देश्य से होता है। अतः उसका विचार अप्रयोजनवादी (Anti-teleolgocial) है। ईश्वर या बुद्धि किसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए जीवों में परिवर्त्तन नहीं कर रही है। यह परिवर्त्तन प्राकृतिक नियमों के द्वारा होता रहता है। जिस प्रकार प्राकृतिक नियमों के अनुकूल सभी ग्रह चल रहे हैं, उसी प्रकार प्राकृतिक नियमों के अनुसार विकास-क्रम भी चल रहा है। यह विचार प्रकृतिवादी (Naturalistic) है। डार्विन ने विश्व को यंत्र की भाँति माना है। कोई बाह्य अप्राकृतिक शक्ति इसका संचालन नहीं कर रही है। प्राकृतिक नियमों के सहारे यह चल रहा है। डार्विन का विचार यंत्रवादी (Mechanistic) है।

(i) डार्विन के अनुसार विकास-क्रम प्राकृतिक निमयों के द्वारा होता है। इसलिए अब प्रश्न है कि जीव-विकास के नियम क्या हैं? इसके पहले कि विकास-क्रम में जितने कारण या नियम (Agencies) काम करते हैं, उनकी व्याख्या की जाय हमें संक्षेप में विकास-क्रम की व्याख्या कर लेनी चाहिए।

विकास-क्रम की व्याख्या

जीवों की संख्या के विषय में डार्विन समकालीन मालथस के विचारों से प्रभावित हुआ। मालथस ने बतलाया है कि जीवधारियों की संख्या जिस अनुपात में बढ़ती है, उस अनुपात में खाद्य-सामग्री की वृद्धि नहीं होती। जीवधारियों की संख्या गुणोत्तर श्रेणी में बढ़ती है, जैसे, 1, 2, 4, 8, 16, 32 के हिसाब से; पर खाद्य-सामग्री समानान्तर श्रेणी में बढ़ती है, जैसे, 2, 4, 6, 8, 12 के हिसाब से। ऐसी हालत में मालथस ने यह विचार किया कि किसी समय ऐसी हालत होगी की प्राणियों की संख्या खाद्य-सामग्री की अपेक्षा दूनी हो जायगी। डार्विन मालथस के अतिवृद्धि के सिद्धान्त को मान लेता है। पर उसके इस विचार से कि प्राणियों की संख्या खाद्य-सामग्री की अपेक्षा दूनी हो जायगी, वह सहमत नहीं है। डार्विन ने बतलाया है कि संसार में प्राणियों की जनशक्ति-खाद्य-सामग्री की अपेक्षा बहुत अधिक है। बिना खाद्य-सामग्री के कोई प्राणी जीवित नहीं रह सकता है और प्राणी में आत्मरक्षा की भावना होती है। इसलिए आत्मरक्षा के हित में आपस में अपने-अपने जीवन के लिए संघर्ष होता है। जीवन की इस प्रतिद्वन्द्विता में उन्हीं जीवों के बचने की सम्भावना है, जिन्हें किसी कारणवश ऐसी शक्ति प्राप्त हो कि परिस्थितियों का सामना करने के लिए दूसरे प्राणियों से वे अधिक योग्य हों। जीवन-संग्राम में योग्यतम की ही रक्षा होती है।

योग्य वही है जो अपने को नये वातावरण तथा नई परिस्थितियों के अनुकूल बना ले। इस प्रकार वातावरण के अनुकूल बनाने में अभ्यास तथा इन्द्रियों में परिवर्त्तन होता है।

Scanned with CamScanner

यह परिवर्त्तन उनके वंशजों को भी प्राप्त होता है। वे स्वयं नये अभ्यास ग्रहण करते हैं और उनके वंशज उनके भागी होते हैं। इस प्रकार क्रमशः रूप परिवर्त्तन हो जाता है और नई जातियों का आविर्भाव होता है। वे प्राणी, जो वातावरण के अनुकूल परिवर्त्तित न हो सकें उनका लोप हो जाता है। डार्विन ने इसी सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य के पूर्व-पुरुष को बन्दर बतलाया है। मनुष्य बन्दर का ही विकसित रूप है।

Scanned with CamScanner